|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 14: गुणत्रयविभागयोग

1/2 (श्लोक 1-10), शनिवार, 04 फ़रवरी 2023

विवेचक: गीता विदूषी सौ वंदना जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/ZaA41jnj61c

सत्त्व,रज और तम में पूर्णतया समत्त्व ही है गुणातीत होना

श्रीभगवान की प्रार्थना के पश्चात जीवन के विकारों रूपी अंधकार को दूर करने हेतु और जीवन के अभ्युदय के लिए दीप प्रज्वलन हुआ। गुरू वन्दना के उपरान्त मातृभूमि को नमन करते हुए भगवान वेदव्यास, ज्ञानेश्वर महाराज एवं सदगुरू को प्रणाम करते हुए श्रीमद्भगवद्गीता के चतुर्दश अध्याय के विवेचन सत्र का शुभारम्भ किया गया। श्रीमद्भगवद्गीता को भगवान श्रीकृष्ण ने युद्ध क्षेत्र में किंकर्तव्यविमूढ़, हतोत्साहित, मोहग्रस्त, अशान्त एवं भ्रमित अर्जुन को सुनाया एवं निराश अर्जुन में गीता जी के इस ज्ञान के माध्यम से उत्साह एवं शांति भर दी जिससे अर्जुन अपना कर्त्तव्य निभाने मे सक्षम हो सके। आज के परिप्रेक्ष्य में भी गीता जी का ज्ञान उतना ही उपयोगी है। अर्जुन की पंक्ति में बैठने वालों के लिए शाश्वत ज्ञान की यह धारा पाँच हजार वर्षों से अविरल बह रही है। श्रीभगवान स्वयं सारथी बनकर हमारा मार्ग प्रशस्त करते हैं। हम सब अपने अपने कर्म क्षेत्र में भ्रमित हैं एवं सही ज्ञान के अभाव मे भटक जाते हैं। गीता का ज्ञान तो अविरल प्रवाहित है, जिसे हम आज भी प्राप्त कर सकते हैं। जैसे भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन के सारथी बन कर उन्हें विजय की दिशा दिखाई थी, उसी प्रकार हम भी श्रीमद्भगवद्गीता के ज्ञान के माध्यम से जीवन को सही दिशा दे सकते हैं। हममें भी अर्जुन की भांति शिष्यत्व का भाव होना चाहिए और शिष्य का कर्त्तव्य है कि ज्ञान के प्रसाद को सभी में बाँटे। श्रीभगवान ने गीता जी के नवम् अध्याय मे ज्ञान एवं विज्ञान की व्याख्या की और द्वादश् अध्याय मे भक्ति मार्ग की सही व्याख्या की।

चतुर्दश् अध्याय में भगवान ने त्रय गुणों - सतोगुण, रजोगुण, एवं तमोगुण के विषय में बताया है। इन गुणों के साथ - साथ इनके द्वारा अभ्युदय एवं नि:श्रेयस के विषय में विस्तार से बताया है। अभ्युदय भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार का होता है और दोनों ही आवश्यक भी हैं। अभ्युदय या भौतिक उन्नति हमे बन्धन मे बाँधती है, यह समझना अत्यन्त आवश्यक है। यह अवरोध या बन्धन मे बाँधने वाले गुणों के विषय में इस अध्याय मे विस्तार से बताया गया है एवं भगवान इनसे गुणातीत हैं, यह भी समझाया गया है। जिस तरह नवें अध्याय में भगवान ने ज्ञान - विज्ञान की बातें खोल दीं। यह भी उसी तरह का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण परंतु उससे थोड़ा सरल एवं व्यावहारिक स्तर पर अधिक महत्ता रखने वाला अध्याय है। इस अध्याय का विवेचन करते हुए ज्ञानेश्वर महाराज जी अपने गुरुदेव की शरण लेते हैं और बहुत सुंदर बात कहते हैं कि:-

म्हणुन साधका तु माऊली पिके सारस्वत तुझ्या पाऊली
या कारणी तुझी साऊली न खंडिन मी कदा।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि मैं यह जानता हूँ कि आपके चरणों के साथ सरस्वती का प्रवेश होता है इसलिए आप का साया मैं

कभी भी छोड़ूँगा नहीं। लेकिन इतनी कृपा कीजिए कि मेरी बुद्धि सिद्धांतों से भर जाए और मैं इन्हीं सिद्धांतों की वर्षा अपने श्रोताओं पर कर दूँ।

यह महत्त्वपूर्ण अध्याय है क्योंकि जहाँ तक हम पहुँचना चाहते हैं, यह अध्याय हमारा मार्ग वहाँ तक प्रशस्त करता है। अभ्युदय और नि:श्रेयस मानव धर्म के दो पहिए माने गए हैं। अभ्युदय से नि:श्रेयस की ओर बढ़ना ही मानव जीवन का अंतिम गंतव्य है। हम अपने अंतिम गंतव्य तक क्यों नहीं पहुँचते हैं? कौन से बंधन हैं? हमें कौन रोकता है? यह गुणों के बंधन हैं। यह अवरोध क्या है? किसने हमें बांधा है? यह अध्याय हमें आईना दिखाता है। हमसे हमारी पहचान करवाता है। इस अध्याय में, अर्जुन के बिना प्रश्न किए ही, भगवान स्वयं कहते हैं।

14.1

श्रीभगवानुवाच
परं(म्) भूयः(फ्) प्रवक्ष्यामि, ज्ञानानां(ञ्) ज्ञानमुत्तमम्।
यज्ज्ञात्वा मुनयः(स्) सर्वे, परां(म्) सिद्धिमितो गताः॥14.1॥

श्रीभगवान बोले – सम्पूर्ण ज्ञानों में उत्तम (और) श्रेष्ठ ज्ञान को मैं फिर कहूँगा, जिसको जानकर सब के सब मुनि लोग इस संसार से (मुक्त होकर) परमसिद्धि को प्राप्त हो गये हैं।

विवेचन:- श्रीभगवान ने कहा कि सभी ज्ञानों मे सर्वोत्तम ज्ञान को तुम्हें सरलता के साथ पुनः बताऊँगा। यह सभी में सर्वोत्तम ज्ञान है। भगवान कहते हैं कि इस ज्ञान से परम् सिद्धि प्राप्त होगी। इसे बार - बार सुनना, समझना होगा, जब तक ठहराव न आ जाए। ज्ञान प्राप्त करने के लिये पुनरावृत्ति आवश्यक है क्योकि ज्ञान मन में ठहरता नहीं है, दूर होता जाता है, अतः मै बार - बार बताऊँगा। इसे प्राप्त कर के मुनि लोग परम् सिद्धि को प्राप्त करते हैं। यहाँ मुनियों के विषय मे भी समझना होगा। मनन् शील व्यक्ति को मुनि कहा गया है। साधारण व्यक्ति सुन कर भूल जाता है लेकिन जो उसका मनन्, चिन्तन एवं मंथन करता है, उसे मुनि कहा गया है। मुनि इस ज्ञान से परम् सिद्धि प्राप्त कर लेते हैं।

सिद्धि भी अनेक प्रकार की होती है, किन्तु परमात्मा के साथ एकरूपता प्राप्त करना परम् सिद्धि है। ज्ञान के विषय में ज्ञानेश्वर महाराज विस्तार से बताते हैं कि सभी ज्ञानों को समझना चाहिए। जैसे उपजीविका का ज्ञान या प्रपंच का ज्ञान या जीवजगत का ज्ञान, परंतु स्वयं को जानने के लिए आत्म तत्त्व का ज्ञान भी आवश्यक है। श्रीभगवान ने अर्जुन को सप्तम् अध्याय में भी ज्ञान-विज्ञान योग के विषय में बताया है। प्रकृति और चैतन्य मिलकर समस्त भूतमात्र निर्मित हुए हैं। अगर हाथ, पाँव, नाक, कान इत्यादि शरीर के सब अंग हों और चैतन्य नहीं हो तो उस शरीर को मृत कहा जाता है। चैतन्य हो तो शरीर से सभी कार्य कराया जा सकता है। अर्थात पंचभूत शरीर एवं चैतन्य रूप आत्मा सृष्टि के लिए आवश्यक है। इस अध्याय में हम स्वयं को जानते हैं। यह अध्याय स्वयं को साक्षी भाव से देखने का अध्याय है।

ठाकुर रामकृष्ण देव ने आराधना और योगाभ्यास से अनेक सिद्धियाँ प्राप्त कीं। वे माँ जगदम्बा के अनन्य भक्त थे। जब उनके भाई ने उन्हें कहा कि गदाधर तुम्हारी नियुक्ति माँ जगदम्बा की सेवा के लिए हुई है तो वह पूरी निष्ठा से माँ की आराधना में लग गए और उन्होंने अपनी माँ से भी कह दिया कि मुझे यह उपजीविका की विद्या नहीं सीखनी। मुझे तो परम विद्या सीखनी है, मुझे परम सिद्धि प्राप्त करनी है और यह ज्ञान, परमसिद्धि शाश्वत होती है।

श्रीभगवान कहते हैं, "जो ज्ञान मैं तुम्हें बता रहा हूँ वह केवल अंतर्मन के ऊपर का आवरण हटाने से उदित होने वाला ज्ञान है। हे अर्जुन! यह ज्ञान प्राप्त होने के बाद तुम परम तत्त्व के साधर्म्य को प्राप्त करोगे।"
श्रीभगवान यह भी कहते हैं कि जिस भक्त का भाव परम सिद्धि प्राप्त करने का हो जाता है तो '**योगक्षेमम् वहाम्यहम्',** अर्थात उसके योग और क्षेम का वहन मैं करता हूँ।

14.2

इदं(ञ्) ज्ञानमुपाश्रित्य, मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते, प्रलये न व्यथन्ति च॥14.2॥

इस ज्ञान का आश्रय लेकर (जो मनुष्य) मेरी सधर्मता को प्राप्त हो गये हैं, (वे) महासर्ग में भी पैदा नहीं होते और महाप्रलय में भी व्यथित नहीं होते।

विवेचन- श्रीभगवान कहते हैं कि इस ज्ञान का आश्रय लेकर जो मनुष्य मेरे स्वरूप को प्राप्त हो जाते हैं, वे महाप्रलय में भी विचलित नही होते हैं। उपाश्रित्य का अर्थ समरस होना है, लिपटा होना है। जो इस ज्ञान मे उपाश्रित्य है, नियमित चिन्तन करने वाला, मनन् करने वाला है वह मेरे साधर्म्य में रहता है। साधर्म्य का अर्थ एकरूपता, सामीप्य की प्राप्ति या मेरे मूल स्वरूप "सत् - चित् - आनन्द", की प्राप्ति है। यह आनन्द वह है जो कभी नष्ट नहीं होता है। इस ज्ञान से अज्ञानता का मैल समाप्त हो जाता है तथा हमें आत्म स्वरूप का अर्थात स्वयं का स्पष्ट दर्शन होता है।

उदाहरण के लिये यदि चंचल या मैली नदी में अंगूठी गिर जाए तो बाहर से नहीं दिखाई देती है लेकिन यदि जल शान्त हो जाए एवं गन्दगी साफ हो जाए तो वह अंगूठी दिखाई देने लगती है।

प्रलय की व्याख्या करते हुए गुरुदेव बताते हैं कि प्रलय शब्द का अर्थ **"प्रकर्षेण लय" है, परमात्मा में सब कुछ लय हो जाना।** प्रलय भी अनेक प्रकार के होते हैं। मुख्यत: चार तरह के प्रलय बताए गए हैं - **नित्य, नैमित्तिक, प्राकृत और आत्यंतिक**।

नित्य प्रलय- जैसे जब हम सो जाते हैं तो आस-पास का विश्व हमारे लिए समाप्त हो जाता है। सब प्रकार के ज्ञानों मे सर्वोत्तम ज्ञान आत्म-ज्ञान होता है। इंद्रियों के द्वारा प्राप्त होने वाला ज्ञान सामान्य ज्ञान है। संसार का ज्ञान प्रपंच का ज्ञान होता है। सर्वोत्तम ज्ञान आत्मज्ञान ही है।

गुरुदेव ने एक सुन्दर प्रसंग बताया है - एक साहूकार ने बहुत धन कमाया। अत्यधिक धन होने के कारण साहूकार की अगली पीढ़ी निकम्मी हो गई। अब साहूकार को अपनी अगली पीढ़ी को लेकर बहुत चिंता हो गई। उसने अपने एक विश्वासपात्र मित्र को बुलाकर कहा कि मेरा सारा धन जमीन में एक जगह छुपा दो और अगर मेरे बेटों का सारा धन ख़त्म हो जाए तब उन्हें यह धन निकालकर दे देना। बाद में हुआ भी ऐसा। साहूकार के बेटों ने सारा धन उड़ा दिया और कंगाल हो गए। साहूकार का एक बेटा विदेश में था जो योग्य था। देश वापस लौटने पर जब उसने सब परिस्थितियां देखी तो वह खूब रोया। तब साहूकार के मित्र ने उस छुपाये हुए धन का पता उस बेटे को बताया और धन पा कर वह बहुत आनंदित हुआ और साहूकार के मित्र को कहा कि आपने मुझे धन दिया इसके लिए मैं आपका धन्यवादी हूँ। तब साहूकार के मित्र बोले कि मैंने धन नहीं दिया, मैंने तो केवल आपके धन के ऊपर का आवरण हटाया। उसी प्रकार गुरु की कृपा से हमारे ज्ञान के ऊपर का आवरण हटकर हमारा ज्ञान प्रस्फुटित होता है। यहाँ श्रीभगवान् अर्जुन के गुरु हैं और मोह का आवरण हटाकर अर्जुन को ज्ञान प्रदान करते हैं।

14.3

मम योनिर्महद्ब्रह्म, तस्मिन्गर्भं(न्) दधाम्यहम्।
सम्भवः(स्) सर्वभूतानां(न्), ततो भवति भारत॥14.3॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! मेरी मूल प्रकृति तो उत्पत्ति स्थान है (और) मैं उसमें जीवरूप गर्भ का स्थापन करता हूँ। उससे सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

विवेचन- श्रीभगवान कहते हैं कि, हे अर्जुन! तुम एवं सभी पंचभूत, मात्र मेरी माया से निर्मित हुए हैं।

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात्।।

श्रीभगवान अर्जुन को बताते हैं कि यह सृष्टि कैसे संचालित होती है। श्रीभगवान प्रक्रिया बताते हैं कि, प्रकृति मेरी अध्यक्षता में जगत् की उत्पत्ति करती है। मेरी महद् ब्रह्मरूप मूल प्रकृति ही सम्पूर्ण भूतों की योनि है अर्थात गर्भाधान स्थान है और मैं बीज रूप में उसमे गर्भ - स्थापन करता हूँ और संसार का निर्माण करता हूँ। विस्तार से कहें तो समझने के लिए इसे स्त्री - पुरुष के उदाहरण से समझते हैं। प्रकृति स्त्री है एवं मैं महद् ब्रह्मरूप पुरुष रूप में हूँ, एवं गर्भ स्थापन करता हूँ और समस्त सृष्टि का निर्माण करता हूँ जिसमें चौरासी लक्ष योनियाँ होती हैं।

बिजली के उदाहरण से समझते हैं, जैसे बिजली ऊर्जा प्रदान करती है और रेफ्रिजरेटर में ठंडक और हीटर में गर्मी प्रदान करती है। उसी प्रकार परमात्मा की चेतन शक्ति अलग-अलग नाम रूपों से भूत मात्रों से काम करवा रही है। यह काम जड़ और चेतन के समन्वय से होता है। जैसे कंप्यूटर पर बैठकर काम करने का अर्थ यह हुआ कि कंप्यूटर जड़ है जिसे अपने स्वरूप का ज्ञान नहीं और कंप्यूटर पर काम करने वाला जिसे स्वयं का और अन्यों का भी ज्ञान है वह चेतन है। सभी योनियों मे कोश होता है जैसे अन्नमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश इत्यादि।

मै सब में बीज देने वाला पिता हूँ। सभी में मेरा गुण अंगीभूत है। हमें सभी पंचभूत अलग - अलग दिखते हैं लेकिन सभी में, मैं ही परम् पिता रूप में विद्यमान होता हूँ। सांख्य योगी यह मानते हैं कि प्रकृति और पुरुष के समन्वय से कार्य चलता है लेकिन वह ईश्वर को नहीं मानते, परंतु भगवान यहाँ कहते हैं कि प्रकृति और पुरुष का संयोग करवाने वाला मैं स्वयं हूँ। प्रकृति सभी को बाँध कर रखती है और यह बंधन ही त्रय गुण हैं। ये त्रय गुण हैं सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण।

14.4

सर्वयोनिषु कौन्तेय, मूर्तयः(स्) सम्भवन्ति याः।
तासां(म्) ब्रह्म महद्योनिः(र्), अहं(म्) बीजप्रदः(फ्) पिता॥14.4॥

हे कुन्तीनन्दन! सम्पूर्ण योनियों में (प्राणियों के) जितने शरीर पैदा होते हैं, उन सबकी मूल प्रकृति तो माता है (और) मैं बीज-स्थापन करने वाला पिता हूँ।

विवेचन-श्रीभगवान कहते है कि, हे अर्जुन! संसार में असंख्य प्रकार की योनियाँ होती हैं। ऐसा कहा जाता है कि कीटों से मनुष्य तक चौरासी लक्ष योनियाँ होती हैं। मनुष्य सर्वोपरि निर्मिति है क्योंकि मनुष्य में सारे कोश विकसित हैं। मनुष्य में अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनंदमय कोश विकसित होता है। दुनिया मे असंख्य प्रकार के जीव हैं। असंख्य योनियों में शरीर का निर्माण होता है। उसके लिए माता - पिता की आवश्यकता होती है। समस्त भूतमात्र (मूर्तियों) के निर्माण में गर्भधारण करने वाली योनि मेरी पत्नी है और उसमें बीज देने वाला पिता मैं हूँ। जिस प्रकार सूर्य की आभा, प्रकाश उसके साथ अंगीभूत है। चंद्रमा की शीतलता, जल की शीतलता उनके साथ अंगीभूत है उसी तरह परमात्मा की प्रकृति भी उनके साथ अंगीभूत है। ये अलग-अलग नहीं हैं। संसार में इतनी विविधता किस कारण है? हमें यह समझना है।

हर देश में तू, हर वेश में तू, तेरे नाम अनेक, तू एक ही है।

हमें यह **एक** दिखाई नहीं देता। हमें **विविधता** दिखती है। अनगिनत तरह के फूल, फल, जीव, पक्षी एवं मछलियां इत्यादि हमें उस विविधता का आभास करवाते हैं। पर हमें उस विविधता से एकता की ओर जाना है। चौरासी लक्ष योनियाँ किस प्रकार निर्मित हुई, उसके बारे में श्रीभगवान ने बताया और फिर यह सारी मूर्तियां बंध गई। इन्हें किसने बांधा है?

14.5

सत्त्वं(म्) रजस्तम इति, गुणाः(फ्) प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो, देहे देहिनमव्ययम्॥14.5॥

हे महाबाहो! प्रकृति से उत्पन्न होने वाले सत्त्व, रज (और) तम – ये (तीनों) गुण अविनाशी देही (जीवात्मा) को देह में बाँध देते हैं।

विवेचन- श्रीभगवान कहते हैं कि कुछ बातें हम कर सकते हैं, कर पाना संभव है पर हम कर नहीं पाते। कौन से ऐसे अवरोध हैं जो हमारे मार्ग को अवरोधित करते हैं?

आगम का एक बहुत सुन्दर वाक्य है -

पाश बद्ध सदा जिवः, पाश मुक्त सदा शिवः।

जो बंधन में है वह जीव है किन्तु जो बंधन मुक्त है वह सदा शिव है।

श्रीभगवान ने अर्जुन को महाबाहो कहा है क्योंकि भगवान निरंतर अर्जुन को उसकी विशेषताओं की याद भी दिलाते रहते हैं। एक गुरु और एक मेंटर (mentor) का कर्त्तव्य भी यही होता है। श्रीभगवान अर्जुन को प्रकृति के स्वभाव के बारे में इस श्लोक में बताते हैं। जीव तो पाश-बद्ध है। पाश या बन्धन जो देह में देही को बाँधता है। यह बन्धन तीन गुण हैं- सतोगुण, रजोगुण एवं तमोगुण। जीव तो पाशबद्ध है और पाशमुक्त शिव अर्थात मैं हूँ। व्ययशील देह ने अव्ययशील चैतन्य को तीन गुणों से बांध लिया। यहाँ गुणों का अर्थ समझना भी बहुत आवश्यक है। यहाँ गुण का अर्थ गुणधर्म (quality) से है। जिस प्रकार अग्नि का गुणधर्म दाहकता और जल का गुणधर्म शीतलता है। गुण को संस्कृत मे रस्सी भी कहते हैं। जैसे रस्सी बाँधती है वैसे ही ये तीनों गुण जीव मात्र को बाँध कर रखते हैं।

सत्त्व, रज एवं तम इन तीनो गुणों को इस उदाहरण से समझा जा सकता है- जैसे कार चलाने मे स्टेयरिंग, पेट्रोल और ब्रेक तीनों आवश्यक होते हैं। कार को सही दिशा देने के लिए स्टेयरिंग उपयोगी है, यह सतोगुण का उदाहरण है। पेट्रोल ईंधन के रूप में शक्ति देता है जो रजोगुण का उदाहरण है और कार को रोकने के लिए ब्रेक भी चाहिए जो तमोगुण का उदाहरण है। सही स्थान पर पहुँचने के लिए इन तीनों का सही उपयोग आवश्यक है।

आत्मतत्त्व अविकारी है, अव्यय है। उस अव्यय आत्मा को शरीर में ये तीनों गुण बाँध कर रखते हैं। इन्हे विस्तार मे समझना पड़ेगा। जो अव्यय, अविनाशी जीवात्मा है, जिसका व्यापक स्वरूप है उसे देह में बंधित करते हैं। व्यापक और व्याप्त परस्पर विरोधी स्वरूप हैं लेकिन आपस में मिल गए हैं। चैतन्य व्यापक है, जड़ व्याप्त है। गैस का गुब्बारा ऊपर न जाने पाए इसलिए वजन बाँधते हैं उसी प्रकार देह के साथ गुणो को बांध दिया है जिससे हम परमात्मा के सच्चिदानंद स्वरुप को भूलकर देह के बंधन में आ गए। देह से प्राप्त सुख से हम सुखी तथा दुःख से दुःखी होते हैं। गुणो के लक्षण भी समझ लो। हर प्राणी में गुणो का अलग-अलग मिश्रण है। जिसे,' **permutations and combinations',** से समझा जा सकता है। हर एक में सत्त्व, रज और तमोगुण हैं। लेकिन जो आलसी है उनमें सत्तर प्रतिशत तमोगुण हैं। जो ज्ञानी है उनमें सत्तर प्रतिशत सत्त्व गुण हैं। दाँत आने की प्रक्रिया सबको अच्छी लगती है लेकिन उसका रुकना भी अनिवार्य है। पेड़ों के विकास का रुकना तमोगुण के कारण होता है और यह अनिवार्य भी है। इन तीनों का उपयोग करते हुए इनके दुष्प्रभावों एवं अतिरिक्त प्रभावों से कैसे बचा जाए, इसे तुम समझ लोगे तो फिर धीरे-धीरे गुणातीत होने की इच्छा बढ़ने लगेगी। ऐसा श्रीभगवान अर्जुन को समझाते हैं। श्रीभगवान कहते हैं कि, अब सत्त्व गुण के लक्षण भी जान लो।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं:-

एरवी ज्ञान हे रूप आपुले | परि परके ऐसे जाहले | कारण आवडोनि घेतले | भवस्वर्गादिक ||

यह ज्ञान अपना ही ज्ञान है जो ढक गया है और पराया हो गया और मनुष्य पृथ्वी और स्वर्ग के भोगो में रममाण हो गया है।

तैसे हे ज्ञान येता उदया | अन्य ज्ञाने जात लया | म्हणोनिया धनंजया | उत्तम हे ||

स्वयं को जानना ही उत्तम ज्ञान है और जब यह ज्ञान उदित होता है तो बाकी ज्ञानों की आवश्यकता ही नहीं होती। वह अपने आप प्राप्त होने लगता है।

14.6

तत्र सत्त्वं(न्) निर्मलत्वात्, प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति, ज्ञानसङ्गेन चानघ॥14.6॥

हे पाप रहित अर्जुन! उन गुणों में सत्त्वगुण निर्मल (स्वच्छ) होने के कारण प्रकाशक (और) निर्विकार है। (वह) सुख की आसक्ति से और ज्ञान की आसक्ति से (देही को) बाँधता है।

विवेचन- श्रीभगवान कहते है कि हे अनघ् अर्जुन! इन तीनों गुणों मे सबसे उत्तम सतोगुण है। भगवान अर्जुन को अनघ कहते हैं क्योकि वह निष्पाप है, शुद्ध है, कुटिल नहीं है।

ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि:-

तु समनु शुद्धमती, अनिंदकु अनन्य गती।
गौप्य तरी तुज प्रति आवळिजे।।

अर्जुन तुम सुमन हो। तुम्हारा मन सुंदर है। तुम्हारी मति भी शुद्ध है और बुद्धि से तुम अनिदंक हो, किसी की निंदा नहीं करते और गुरुदेव की शरणागति होना तो कोई तुमसे सीखे। इसलिए यह सिद्धांत तुम्हें बताने के लिए मैं लालायित हूँ। गुलाबराज जी महाराज कहते हैं कि सत्त्व गुण को बढ़ाते जाना ही मनुष्य का धर्म है। मनुष्य को ऐसा प्रयास निरंतर करना चाहिए कि वह तम से रज|और रज से सत्त्व गुण में प्रवृष्ट हो जाए।

श्रीभगवान कहते हैं कि सतोगुण पवित्र है, शुद्ध है, प्रकाश देने वाला, ज्ञान देने वाला है। यह मन के विकारों को दूर करने वाला है। यह मन के मैल को धोने वाला गुण है। यह सतोगुण **अनामय** है अर्थात् रोगों को दूर करने वाला है। यह सुख प्रदान करने वाला गुण है।

गीता जी की महत्ती गाते हुए महानुभाव कहते हैं कि:-

मलनिर्मोचनं पुंसां जलस्नानं दिने दिने |
सकृद्गीताम्भसि स्नानं संसारमलनाशनम्||

जैसे हम जल से स्नान कर भौतिक शरीर के मैल को साफ करते हैं, इसी प्रकार गीता जी के पानी से रोज नहाना चाहिए जिससे अंदर बाहर शुचिता का निर्माण होता है। पढ़ने, सुनने और कंठस्थ करने से भी अंन्त:करण की शुद्धि होती है और सत्त्व गुण का उद्भव होता है।

लेकिन यह सत्त्व गुण भी बाँधता है। सुख की प्राप्ति पर यह बाँधता है। ज्ञान उत्पन्न होने के कारण भी बाँधता है। ज्ञान अहंकार उत्पन्न कर सकता है, दूसरो को हीन दृष्टि से देखने का कारक हो सकता है जो हमे नीचे ले जा सकता है।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि:-

हा ज्ञानाने माजतो, अहंकारा ने ताठ होतो।

जब ज्ञान के साथ अहंकार आता है तो मनुष्य अहंकार के बंधन में बंध जाता है। ज्ञान अच्छा लगने लगता है तो कर्म अच्छा नहीं लगता। अधूरे ज्ञान वाला मनुष्य इसके बंधन मे आ सकता है। शुद्ध सतोगुणी मनुष्य बंधन मे नही बंधता है।

इस संदर्भ में स्वामी विवेकानंद जी के जीवन से एक बहुत सुंदर प्रसंग है।

स्वामी जी को एक बार प्रवचन करने के लिए अमेरिका में आमंत्रित किया गया। तब रंगभेद बहुत प्रचलन में था। स्वामी जी सांवले रंग के थे तो दरवान ने स्वामी जी को नीग्रो समझकर अंदर नहीं जाने दिया। स्वामी जी वापस आ गए। कुछ दिनों के बाद उस कार्यक्रम के आयोजक स्वामी जी को मिले। तब उन्होंने स्वामी जी से पूछा कि आप कार्यक्रम में आए क्यों नहीं? स्वामी जी ने बताया कि मैं आया था लेकिन आपके दरवान ने मुझे नीग्रो समझकर अंदर नहीं जाने दिया। सज्जन ने कहा कि आप गेटकीपर को बता देते कि आप नीग्रो नहीं है। इस पर स्वामी जी ने उत्तर दिया कि ऐसा कहना मेरे लिए ऐसे है जैसे नीग्रो को नीचा दिखाना। मैं किसी को नीचे दिखा कर ऊपर उठना नहीं चाहता। दृष्टि को कैसे ऊपर रखना है, ताकि हम अधोगति की ओर अग्रसर न हों, यह हमें श्रीमद्भगवद्गीता सिखाती है।

14.7

रजो रागात्मकं(म्) विद्धि, तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय, कर्मसङ्गेन देहिनम्॥14.7॥

हे कुन्तीनन्दन! तृष्णा और आसक्ति को पैदा करने वाले रजोगुण को (तुम) रागस्वरूप समझो। वह कर्मों की आसक्ति से देही जीवात्मा को बाँधता है।

विवेचन- श्रीभगवान कहते है कि, हे कुन्तीनन्दन अर्जुन! रजोगुण आसक्त करता है, कामना-इच्छा का निर्माण करता है। रज शब्द रंजन से बना है, यह गुण रंजन चाहता है, मनोरंजन चाहता है। आसक्ति का निर्माण करता है। यह दौड़ाता है, कर्म करवाता है। कहाँ रुकना चाहिए, रजोगुणी यह नहीं समझ पाता है। यह चंचलता पैदा करता है, अतृप्ति पैदा करता है। आशा के बँधन में आते ही वह रजोगुणी सम्पूर्ण शक्ति से दौड़ने लगता है। श्रीमद्भगवद्गीता हमें सिखाती है कि इसे हमें देखना और समझना चाहिए।

ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि:-

रंजन करतो जिवाचे म्हणून रज नाव याचे |

रजोगुण मनोरंजन चाहता है। यह राग और आसक्ति को बढ़ाने वाला है। अत्यधिक आसक्ति के साथ कामना, तृष्णा का उद्भव होता है। एक के बाद दूसरा पद, एक प्रतिष्ठा के बाद दूसरी प्रतिष्ठा पाने की दौड़ लगी रहती है। कर्म के बिना यश नहीं, यह सत्य है। लेकिन कर्म करते - करते कहाँ रुकना है यह भी हमें सीखना चाहिए।

14.8

तमस्त्वज्ञानजं(म्) विद्धि, मोहनं(म्) सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभि:(स्), तन्निबध्नाति भारत॥14.8॥

और हे भरतवंशी अर्जुन! सम्पूर्ण देहधारियों को मोहित करने वाले तमोगुण को (तुम) अज्ञान से उत्पन्न होने वाला समझो। वह प्रमाद, आलस्य और निद्रा के द्वारा (देह के साथ अपना संबंध मानने वालों को) बाँधता है।

विवेचन- श्रीभगवान कहते हैं कि, हे भरतवंशी अर्जुन! तमोगुण का निर्माण अज्ञान से होता है। यहाँ भगवान अर्जुन को भारत कहते है जिसका अर्थ ज्ञान से लिप्त होना है। तमोगुण में मोह, अज्ञानता, आलस्य उत्पन्न होता है। तमोगुण के बढ़ने पर प्रमाद (गलतियाँ), आलस्य, निद्रा आदि बढ़ते हैं। आलस्य, निद्रा आदि तमोगुण अत्यधिक प्रतिक्रया करने का बंधन भी उत्पन्न करते हैं। हमें इसे भी समझना पड़ेगा।

ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि:-

मार्गी जाता घसरुन पडला तरी तेथेच लागे डोळा

झोप येता अम्रुताला नाकारतो।

तमोगुण तो ऐसा है कि तमोगुण के वश में मनुष्य को अगर मार्ग में चलते ठोकर लग जाए तो गिर कर वहीं पर निद्रा ग्रस्त हो जाता है और अमृत लेकर उठाने पर भी नहीं उठ पाता। किस प्रकार निद्रा हावी हो जाती है। ऐसे इंसान को निद्रा या विश्रांति अति प्रिय होती है। तमोगुण ज्ञान को आवृत करते हुए प्रमाद में बाँधता है।

14.9

सत्त्वं(म्) सुखे सञ्जयति, रजः(ख्) कर्मणि भारत।
ज्ञानमावृत्य तु तमः(फ्), प्रमादे सञ्जयत्युत॥14.9॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! सत्त्वगुण सुख में (और) रजोगुण कर्म में लगाकर (मनुष्य पर) विजय करता है। परन्तु तमोगुण ज्ञान को ढककर एवं प्रमाद में लगाकर (मनुष्य पर) विजय करता है।

विवेचन-श्रीभगवान कहते हैं कि, जब तक बंधन को नहीं समझोगे, बंधन से छुटकारा भी नहीं होगा। स्वामी विवेकानंद जी कहते थे सत्त्व गुण का नाम लेते - लेते यह देश तमोगुण में डूब गया। विवेचन सुनते समय भी बहुत से लोगों पर निद्रा हावी होने लगती है। सतोगुण कब रजोगुण में बदल जाए पता ही नहीं लगता।

श्रीभगवान कहते हैं कि हे अर्जुन, सत्त्व गुण सुख में आसक्त करके रखता है। रजोगुण कर्म के बंधन मे डालता है और ज्ञान को ढक कर रखता है। तमोगुण के कारण गलतियाँ बढ़ती हैं। निद्रा में सुख आने लगता है, आलस्य बढ़ता है। यह तीनो गुण एक दूसरे पर हावी होने का प्रयास करते हैं। हमें इसे समझना चाहिए।

14.10

रजस्तमश्चाभिभूय, सत्त्वं(म्) भवति भारत।
रजः(स्) सत्त्वं(न्) तमश्चैव, तमः(स्) सत्त्वं(म्) रजस्तथा॥14.10॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सत्त्व गुण बढ़ता है, सत्त्व गुण और तमोगुण को दबाकर रजोगुण (बढ़ता है) वैसे ही सत्त्वगुण (और) रजोगुण को दबाकर तमोगुण (बढ़ता है)।

विवेचन- श्रीभगवान कहते हैं कि, हे अर्जुन! रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सतोगुण बढ़ता है। सुबह उठना, योगाभ्यास करना यह सतोगुण है। तमोगुण बढ़ता है तो सुबह उठने की इच्छा नही होती। तीनों गुणों मे से कौन-सा प्रबल है यह हमें देखना चाहिए। स्वयं पर नियन्त्रण रखना चाहिए। तमोगुण को दबाकर रजोगुण और सतोगुण को बढ़ाना चाहिए। श्रीभगवान ने कहा कि मै इन तीनो गुणों से मुक्त हूँ, गुणातीत हूँ। जो इन गुणों को समझ जाते हैं और साक्षी भाव से उन्हें देख कर गुणातीत होने का प्रयास करते हैं, वे सिद्ध हो जाते हैं।

एक बहुत सुंदर उदाहरण है। एक गर्भवती शेरनी कुछ बकरियों का शिकार करते समय घायल हो जाती है और प्रसव हो जाता है। शिशु के पैदा होते ही शेरनी की मृत्यु हो जाती है। शिशु शेर उन बकरियों के मध्य बड़ा होता है और बकरियों जैसा व्यवहार करता है। वह शेर है, यह उसे ज्ञात नहीं होता और अपने असली स्वरूप को भूल बैठता है। एक दिन एकअन्य शेर उसे तालाब के जल में उसे उसका प्रतिबिंब अर्थात उसका वास्तविक स्वरूप दिखाता है तो उसमे पुनः शेर होने का ज्ञान, आभास जागृत हो जाता है और शक्ति भी आ जाती है। अतः सही ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

आदि शंकराचार्य जी कहते हैं कि:-

न मे मृत्यु शंका न मे जातिभेद: पिता नैव मे नैव माता न जन्म:
न बन्धुर्न मित्रः गुरुर्नैव शिष्य: चिदानन्द रूप: शिवोऽहम् शिवोऽहम्।

अर्थात न मैं मृत्यु हूँ, न शंका, न जातिभेद, न पिता, न माता, न जन्म, न बंधु, न मित्र, न गुरू, न शिष्य हूँ। मैं चिदानंद स्वरूप हूँ। श्रीमद्भगवद्गीता और हमारे सभी ग्रंथ हमें हमारे उस गंतव्य तक ले जाते हैं और हमें हमारे असली स्वरूप का दर्शन करवाते हैं। जैसे उपरोक्त कहानी में जब शेर ने शेरनी के शिशु को उसका असली स्वरूप दिखाया तभी उसे अपने अंदर छिपी शक्ति का अनुभव हुआ।

रामचरितमानस, ज्ञानेश्वरी, श्रीमद्भगवद्गीता और हमारे समस्त ग्रंथ हमें हमारे स्वरूप से परिचित करवाते हैं। हमें बताते हैं कि तुम देह नहीं, तुम चैतन्य स्वरूप हो।

यह सारे गुण और गुणातीत के लक्षण.हम अगले विवेचन सत्र में समझेंगे। गुरुदेव हमें वहाँ तक ले जाएं और हमारा मार्ग प्रशस्त करें, इसी प्रार्थना के साथ आज के विवेचन सत्र का समापन हुआ और प्रश्नोत्तर सत्र आरंभ हुआ।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता: हार्दिक जी

प्रश्न: मैं सत्त्व गुण धारण करने की कोशिश करता हूँ और वैसा भोजन लेना चाहता हूँ लेकिन परिस्थिति वश वैसा भोजन नहीं मिलने पर दुःखी होता हूँ, क्या करूँ?

उत्तर- सतोगुण के आहार को करने का यथासम्भव प्रयास करें और असम्भव होने पर जीवन रक्षा के लिए अन्य आहार लेने से सतोगुण में कमी नहीं होगी। **यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्|** जो भी खा रहे हैं उसे परमात्मा को अर्पित करते हुए खाएं। किसी तरह की कोई दुविधा नहीं रहेगी।

प्रश्नकर्ता: गीता जी

प्रश्न- तीनों गुणों को संतुलित कैसे रखे?

उत्तर- सतोगुण को बढ़ाने का कार्य करते रहें। रजोगुण को शान्त रखें, चंचलता पर नियंत्रण रखें एवं तमोगुण पर ध्यान रखकर उसे संयमित रखने का प्रयास करें।

प्रश्नकर्ता: शिवा राम जी

प्रश्न- भगवान सर्वगुण सम्पन्न होते हैं, यह कहा जाता है, क्या यह त्रय गुणों के विषय में कहा गया है?

उत्तर- यह भगवान का सर्वगुण सम्पन्न होना अलग है क्योकि वे तो त्रय गुणातीत हैं। मानव रूप में अवतार लेने पर वे भी त्रय गुण से बँधते है लेकिन वे उन गुणों के साथ एक मानव की तरह ही व्यवहार करते हैं। वे अपने आचरण से यह बताते हैं कि इन तीनों गुणों को कैसे संतुलित करते हुए जीवन व्यतीत करना है। इसका एक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जैसे श्रीकृष्ण सतोगुण के उदाहरण के रूप में हैं और अर्जुन रजोगुण के रूप में।

प्रश्नकर्ता: शिवा राम जी

प्रश्न- अहंकार की व्याख्या करें?

उत्तर- अहंकार अति सूक्ष्म होता है। यह मेरे पन के भाव से उत्पन्न होता है। मैं अच्छा हूँ, यह भाव स्वाभिमान का भाव होता है लेकिन यदि मैं यह बोलूँ कि मैं ही अच्छा हूँ, तो यह अभिमान का भाव हो जाता है।

इसके बाद प्रार्थना के उपरांत सत्र समाप्त हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||